दैनिक भास्कर

Date: 30-12-17

सियासत और इंसानियत के बीच समाज सुधार का कदम

संपादकीय

अच्छा हुआ कि विपक्ष के दिखावटी विरोध को दरकिनार करते हुए तलाक-ए-बिद्दत को संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध बनाने वाला मुस्लिम महिला विधेयक लोकसभा से पास हो गया और इस पर राजनीति की संभावना घट गई। अभी इसे राज्यसभा से पास होना है लेकिन, लोकसभा में तकरीबन 150 की ताकत रखने वाले विपक्ष ने संशोधन के पक्ष में महज चार वोट दिए इसलिए उसके समक्ष वहां भी बाधा पैदा होने की गुंजाइश नहीं है। शाहबानो मामले के दूध की जली कांग्रेस ने शायरा बानो के मामले से निकले इस छाछ को फूंकना भी उचित नहीं समझा और राजद, तृणमूल, अन्नाद्रमुक, बीजद और वाममोर्चा ने भी क्षेत्रीय मजबूरियों के बावजूद प्रतीकात्मक विरोध से आगे कदम नहीं बढ़ाया। यह सिर्फ सुप्रीम कोर्ट के फैसले को देखते हुए लोकतांत्रिक संस्था के आदर का प्रश्न बना बल्कि कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद के शब्दों में सियासत से ज्यादा इंसानियत और स्त्रियों के अधिकार सम्मान का मसला था। अब जो इस कानून का विरोध कर रहे हैं उनके भीतर या तो अल्पसंख्यक असुरक्षा की ग्रंथि है या फिर कानून के तकनीकी पहलू को लेकर कुछ दिक्कतें। अल्पसंख्यक पहचान का मसला जरूर है और उसे ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड ने विरोध का आधार बना रखा है। अब यह सरकार और विपक्ष दोनों की जिम्मेदारी है कि इन आशंकाओं को दूर किया जाए। क्योंकि भारत के राजनीतिक दलों ने कभी तुष्टीकरण तो कभी साम्प्रदायिकता के माध्यम से मुस्लिम समुदाय के भीतर अल्पसंख्यक ग्रंथि पैदा की है। वरना कोई वजह नहीं है कि जो तीन तलाक पाकिस्तान, बांग्लादेश, मिस्र, ट्यूनीशिया समेत कई इस्लामी अरब देशों में प्रतिबंधित और दंडनीय है और जिसके बारे में भारत की सर्वोच्च अदालत ने 32 साल पहले भी प्रतिकूल टिप्पणियां की थीं उस पर संसद के कानून बनने में इतनी देर होती। अगर यह काम 32 साल पहले 1985 में उस समय कर दिया गया होता जब शाहबानो के मुआवजे के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने एक अहम फैसला दिया था तो आज स्थिति कुछ और ही होती। दुर्भाग्य है कि उस समय की सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी मुस्लिम समाज के पुरुषवादी और कट्टरपंथी तबके से दब गई और न्यायालय के फैसले को पलटने वाला कानून पास कर बैठी, जिसकी सजा मुस्लिम महिलाओं के साथ इस देश की धर्मनिरपेक्ष राजनीति भुगत रही है।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 29-12-17

लोक विकास की कुंजी

सुशील कुमार सिंह

मौजूदा समय में सरकार की प्रक्रियाएं नागरिकों पर केन्द्रित होते हुए एक नये डिज़ायन और सिंगल विंडो संस्कृति में तब्दील हो रही है। सुशासन में निहित ई-गवर्नेंस की ज्यादातर पहल में बिज़नेस मॉडल, पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप समुचित तकनीक और स्मार्ट सरकार के साथ इंटरफेस उद्यमिता इत्यादि का उपयोग किया जाता है, लेकिन आगे बढ़ने या आरम्भिक सफलता को दोहरा पाने में यह पूरी तरह अभी सफल नहीं है। सुशासन एक लोक प्रवर्धित अवधारणा है जो शासन को अधिक खुला, पारदर्शी तथा उत्तरदायी बनाता है ताकि सामाजिक-आर्थिक उन्नयन में सरकारें खुली किताब की तरह रहें और देश की जनता को दिल खोलकर विकास दें। मानवाधिकार, सहभागी विकास और लोकतांत्रिकरण का महत्व सुशासन की सीमाओं में आते हैं।

1991 में उदारीकरण के तीन दशक के बाद यह कहा जा सकता है कि सूचना का अधिकार, नागरिक घोणापत्र, ई-गवर्नेंस, सिटीजन चार्टर, ई-याचिका तथा ई-सुविधा समेत लोकहित से जुड़े तमाम संदर्भ सुशासन की दिशा में उठे कदम ही हैं। इसमें कोई दुविधा नहीं कि सुशासन के कोर में सरकार की जिम्मेदारी कहीं अधिक है। भारत के परिप्रेक्ष्य में सुशासन और इसके समक्ष खड़ी चुनौतियां दूसरे देशों की तुलना में भिन्न हैं। जाहिर है न्याय, सशक्तीकरण, रोजगार एवं क्षमतापूर्वक सेवा प्रदान करने से जब तक समाज के प्रत्येक तबके को गरीबी, बीमारी, शिक्षा, चिकित्सा समेत बुनियादी तत्वों को हल नहीं मिलता तब तक सुशासन की परिभाषा अधूरी रहेगी।

सुशासन की क्षमताओं को लेकर ढेर सारी आशाएं हैं। इन्हीं को ध्यान में रखते हुए प्रधानमंत्री मोदी सत्ता में आते ही सुशासन को लेकर कुछ सक्रिय दिखाई दिये। 25 दिसम्बर को क्रिसमस दिवस के रूप में ही नहीं बल्कि पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के जन्मदिन के रूप में भी मनाने की प्रथा रही है। मोदी वर्ष 2014 में इस तिथि को सुशासन दिवस के रूप में प्रतिष्ठित किया। ऐसा अटल बिहारी वाजपेयी को और अधिक सम्मान देने के लिए किया गया। तभी से 25 दिसम्बर ने एक नई अवधारणा व विचारधारा से पोषित हो सुशासनिक राह ले लिया। सफल और मजबूत मानवीय विकास को समझने के लिए सुशासन के निहित आयामों को जांचा-परखा जा सकता है। प्रधानमंत्री मोदी साढ़े तीन वर्ष का कार्यकाल बिता चुके हैं। सुशासन की अभिक्रियाओं से यह उतना भरा समय नहीं दिखता जितना व्यावहारिक तौर पर होना चाहिए।

पिछले कुछ वर्षो से हमारी अर्थव्यवस्था संकट में है। नोटबंदी और जीएसटी के चलते इसके साईड इफैक्ट भी देखने को मिले। मेक इन इण्डिया समेत स्टार्टअप एण्ड स्टैण्डअप इण्डिया से उम्मीदें खूब लगायी गई पर देश की नौकरशाही में व्याप्त ढांचागत कमियां और क्रियान्वयन में छुपी उदासीनता के अलावा निहित भ्रष्टाचार पर पूरा नियंतण्रन होने से मामला कागजी ही सिद्ध हुआ है। स्किल डवलपमेंट मामले में चीन से ही नहीं हम दक्षिण कोरिया जैसे छोटे राष्ट्र से भी पीछे हैं। भारत के नगरों और गांवों के विकास के लिए वर्ष 1992 में 73वें और 74वें संविधान संशोधन इस दिशा में

उठाया गया कदम था। प्रधानमंत्री मोदी न्यू इण्डिया की बात कर रहे हैं लेकिन इस पर शक कम होने के बजाय गहराता है। जब तक कृषि क्षेत्र और इससे जुड़ा मानव संसाधन भूखा-प्यासा और शोषित महसूस करेगा। सुशासन के लिए महत्वपूर्ण कदम सरकार की प्रक्रियाओं को सरल बनाना भी है और ऐसा तभी होगा जब पूरी पण्राली पारदर्शी और ईमानदार हो। पुरानी पड़ चुकी नौकरशाही के ढांचे में नई जान फूंकना मोदी के लिए भी न पहले आसान था और न अब। हां कोशिश बड़ी जरूर की जा रही है।

यह कहना सही है कि डिजिटल गवर्नेंस का दौर बढ़ा है। भारत में नवीन लोकप्रबंधन की पण्राली के रूप में यह संचालित भी हो रहा है पर सुशासन के भाव में तब बढ़ोत्तरी होगी जब सरकार के नियोजन तत्पश्चात होने वाले क्रियान्वयन का सीधा लाभ जनता को मिले। हालांकि जनधन योजना के तहत खोले गये 25 करोड़ से अधिक बैंक खाते कई काम आ रहे हैं। गैस की सब्सिडी इसी के माध्यम से सीधे जनता को मिल रही है पर सरकार जिस प्रकार सब्सिडी हटा रही है और मार्च 2018 तक लगभग इसे समाप्त करने की कोशिश में है। यह सुशासन नहीं बल्कि यह एक आर्थिक गणना है जिसमें लोक कल्याण कम आर्थिक मुनाफे पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 29-12-17

बचत पर ब्याज

संपादकीय

यह ब्याज दरें नीचे आने का दौर है। पिछले काफी समय से रिजर्व बैंक ब्याज दरों और बैंक दरों आदि को नीचे ले भी गया है। देर-सवेर यह सिलसिला उन छोटी बचत तक आना ही था, जो तरह-तरह के सरकारी बांड आदि में जमा करते हैं। मसलन, नेशनल सेविंग स्कीम, किसान विकास पत्र, या भविष्य निधि योजना वगैरह। सरकार ने अब इन बचत योजनाओं में दिए जाने वाले ब्याज की दरों में मामूली कटौती कर दी है। यह कटौती महज 0.2 फीसदी ही होगी। जैसे, किसान विकास पत्र में अभी तक ब्याज दर 7.8 फीसदी थी, अब इस योजना में धन जमा करने वालों को 7.6 फीसदी की दर से ब्याज मिलेगा। इतनी ही कटौती भविष्य निधि योजना में भी हुई है। कारण कुछ भी हो और कटौती कितनी भी कम क्यों न हो, लेकिन यह उन लोगों के मुंह का स्वाद कड़वा जरूर करती है, जिन्होंने इन योजनाओं में धन लगाया है। हो सकता है कि इसके बाद इसमें धन लगाने वालों को अपने भविष्य की सपनों में थोड़ी-बहुत कतर-ब्योंत भी करनी पडे। लेकिन इन सभी योजनाओं से जुड़ा एक सच यह भी है कि जो लोग इन योजनाओं में धन लगाते हैं, उन्हें ब्याज के रूप में ही एकमात्र लाभ नहीं मिलता। इन योजनाओं में धन लगाकर वे अपनी आयकर की देनदारी को भी कम करते हैं। यह लाभ भी कम महत्वपूर्ण नहीं होता और इस प्रावधान में कोई बदलाव नहीं किया गया

है, इसलिए वह लाभ तो लोगों को मिलता ही रहेगा। आयकर बचत को इन योजनाओं का एक प्रमुख आकर्षण माना जाता है। अक्सर यह भी कहा जाता है कि अगर आयकर बचत का प्रावधान खत्म कर दिया जाए, तो ऐसी कई योजनाएं तो बैठ भी सकती हैं। एक और तर्क यह भी है कि ब्याज भले ही कम कर दिया गया हो, लेकिन फिर भी यह एक तो मुद्रास्फीति की दर से ज्यादा है और दूसरे बैंकों के बचत खातों से भी ज्यादा। यानी ये छोटी बचत की सरकारी योजनाएं अभी भी आपको सबसे अच्छी ब्याज दर दे रही हैं और महंगाई से आपके धन की रक्षा भी कर रही हैं। फिर ये ऐसी योजनाएं हैं, जिनमें आपके धन के लिए जोखिम दूसरे सभी तरीकों के मुकाबले सबसे कम है और आपके धन की सुरक्षा की गारंटी सबसे ज्यादा।

निजी बचत के इन तर्कों से आगे एक चर्चा यह भी है कि सरकार के लिए इस समय यह जरूरी था, क्योंकि वित्त वर्ष में अब लगभग एक तिमाही ही बची है और इस बीच सरकार को वित्तीय घाटे को पटरी पर लाना है। आप चाहें, तो इस बदलाव को उन खबरों से जोड़कर भी देख सकते हैं कि जीएसटी से होने वाली सरकार की आमदनी (प्रतिमाह के आकड़ों के अनुसार) लगातार नीचे आ रही है। जीएसटी प्राप्तियों की यह कहानी भले ही ब्याज दर कम करने के ताजा कदम से सीधे न जुड़ती हो, लेकिन यह वित्तीय घाटे से तो जुड़ती ही है।

हालांकि यह भी तय है कि कम ब्याज दरों वाला मौजूदा दौर ज्यादा लंबा चलने वाला नहीं है। अर्थव्यवस्था ने छलांग लगाई, तो मुद्रास्फीति भी बहुत पीछे नहीं रहेगी। यह भी कहा जा रहा है कि पेट्रोलियम उत्पादों की कीमतों में सुस्ती का दौर अब किसी भी समय खत्म हो सकता है। कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि हमारे देश में महंगाई का सबसे बड़ा कारण बनती रही है। यह सब हुआ, तो ब्याज दरें भी धीरे-धीरे ऊपर की ओर जाएंगी ही। कर्ज पर आप जो ब्याज दे रहे हैं, वह कुछ तेजी से और कुछ ज्यादा बढेगा, तो दूसरी तरफ आपकी बचत पर मिलने वाला ब्याज सुस्ती से धीरे-धीरे बढेगा। बचत पर ब्याज दर बढ़ने के सुख कभी भी उतने ज्यादा नहीं होते, जितने कि महंगाई बढ़ने के कष्ट होते हैं।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 29-12-17

How To Act East

Improve security in Northeast to improve connectivity with South East Asia

Arun Sahni, [The writer is a former General Officer Commanding in Chief, Indian Army]

Political will and dynamism for propelling India's "Act East" policy needs to be complemented with urgent measures to address two key issues — lack of "security" and "connectivity". Addressing them is necessary to make the Northeast (NE) the launchpad for India's interface with South East Asia. Connectivity needs to be addressed at three levels — physical connectivity, digital connectivity and above all the emotional integration of the region with the rest of the country. Road and railway networks connecting different parts of the region, as well as the rest of the country with the region, along with air/helicopter connectivity are essential for trade and businesses to flourish, to attract investments and put in place an ecosystem that is necessary to reach out to Myanmar and beyond.

With respect to security, there is a need to think out of the box on priorities and carry out disruptive policy changes. These should be combined with a time-bound action plan to create a conducive environment for growth and prosperity. The implementation of projects has been dogged by procedural issues. Cases in point are the projects that intend to create road-rail-inland waterway connectivity between India, Bangladesh and Myanmar. At a recent NE connectivity conference, a Bangladesh delegate said that when connectivity projects were first envisaged at the highest level of leadership of the two countries 10 years ago, investors in Bangladesh set up warehousing facilities and other infrastructure at transit points. Because of time overruns, these have either been diverted for other activities or have folded up.

The land earmarked for the development of linkages has been utilised for other activities and may not be available or would cost exorbitant. The Indo-Myanmar friendship road required approximately 80 odd bridges to be replaced/upgraded for it to become the Asian Highway 1. But after a delay of around seven years, it is slated to be completed in 2019 — perhaps later. Also, the backward linkage from Moreh, the border town in Manipur, to Silchar in Assam and westwards to the Siliguri corridor has also been dogged by slow progress.This is not to underplay the steps taken by the government in the last three years to facilitate integration. Intra-regional connectivity has been given an impetus by mandating its responsibility to a newly-formed centrally-monitored organisation for road development and physical connectivity in NE states. An internet gateway is being established via Bangladesh from Tripura for the digital integration of the region.

The security environment will be the main factor in propelling the integration and development of the region. A secure environment is a pre-requisite for giving confidence to investors to operate in the region. The parameters of gauging security needs have to be changed since they do not give a fair idea of the security situation in the region so for as developmental initiatives are concerned. The number of violent incidents and counter-terrorist operations by security forces are declining but has the environment become secure? The answer is no since there has been no let up in extortion, kidnapping, factional clashes and illicit tax collection. The militant groups enjoy political patronage.

Government policies pertaining to “suspension of operations (SOO)” and “ceasefire” with various militant groups need to account for the financial support these groups have. In the long run, the system of SOO and CF needs to be stopped, as it is a case of “distributive injustice”. Police effectiveness needs to be optimised. This requires “federalisng” the region’s police force in order to ensure coordination, sharing intelligence and joint operations. This force would not be under a state authority and would thus be insulated from extraneous pressures, including tribal affiliations. FIRs against individuals committing offences will be filed outside the state borders, negating local influences in justice administration. The official machinery should counter militant excesses and not abrogate their authority to the security forces under the excuse that the state has been designated a “disturbed area”.But there is also a need to look at development and trade outside the prism of security. The endeavour should be to create “intellectual resonance” in society for security and development. We need a comprehensive approach that combines reconciliation with an aggressive security policy.

THE HINDU

Date: 29-12-17

Growing forests

A scientific national plan to expand good green cover is absolutely essential

EDITORIAL

The disclosure in Parliament that the Centre is not ready with the rules to implement the Compensatory Afforestation Fund Act, 2016 demonstrates that the government's resolve to meet a variety of environmental objectives, including major commitments under the Paris Agreement on climate change and the Sustainable Development Goals, remains woefully weak. It is, of course, debatable whether the Act, with the disbursal mechanism through national and State funds that it mandates, is a sound remedy for loss of rich forests that continues to occur because of developmental and biotic pressures. The evidence on compensatory afforestation in a big project such as the Sardar Sarovar Dam, for instance, is not encouraging. About 13,000 hectares were compensated there, but only with patchy outcomes: healthy monoculture plantations having low biodiversity value came up in some places, while others resulted in unhealthy plantations with few trees. Be that as it may, diversion of forests for non-forest use seems inevitable to some degree, and the accumulation of about 40,000 crore in compensatory funds clearly points to significant annexation of important habitats. The task is to make an assessment of suitable lands, preferably contiguous with protected areas that can be turned over for management to a joint apparatus consisting of forest department staff and scientific experts.

Putting in place a scientific national plan to expand good green cover is essential, since the sequestration of carbon through sustainably managed forests is a key component of the commitment made under the Paris Agreement. There is already a Green India Mission, which is distinct from the framework envisaged for compensatory afforestation. What the Centre needs to do is to enable independent audit of all connected programmes, in order to sensibly deploy the financial resources now available. It must be emphasised, however, that replacing a natural forest with a plantation does not really serve the cause of nature, wildlife, or the forest-dwelling communities who depend on it, because of the sheer loss of biodiversity. Yet, there is immense potential to augment the services of forests through a careful choice of plants and trees under the afforestation programme. All this can make a beginning only with the actualisation of the law passed in 2016. It is worth pointing out that the method used to calculate the net present value of forests, taking into account all ecosystem services they provide, is far from perfect, as many scientists point out. Some of the momentum for compensatory afforestation has come from judicial directives, but now that there is a new law in place, it should be given a foundation of rules that rest on scientific credibility.